प्रथम महायुद्धकालीन भारतीय सेना– भारत में जहाँ एक ओर राष्ट्रवादी आन्दोलन तेज हो चला था, वहीं दूसरी ओर यूरोप में युद्ध के बादल छाने लगे। एडवर्ड सप्तम (ब्रिटिश सम्राट) ने भारतीयों को किंग कमीशन देने की मांग के तहत 1905 में ही भारतीय सैन्य अफसरों को इम्पीरियल कैडेट कोर से अलंकृत किया, जिससे उन्हें कम्पनी स्तर पर कमाण्ड करने का अवसर एवं अधिकार मिल गया। प्रथम महायुद्ध में उतरने से पूर्व सेना की युद्ध क्षमता एवं कार्य कुशलता आदि को जांचने हेतु 1912 में निकलसन आयोग बनाया गया और सेना की कमियों को दूर कर युद्ध योग्य बनाया गया। 1 अगस्त 1914 को सम्पूर्ण भारतीय सेना की संख्या 1,55,423 थी, जो आगे चलकर 5,70,484 हो गयी थी। इस महायुद्ध में भारतीय सेना ने 16 विक्टोरिया क्रॉस तथा 99 मिलिट्री क्रॉस प्राप्त किये। मरने और घायल होने वाले सैनिकों की संख्या क्रमशः 36,696 व 70 हजार थी।

इस महायुद्ध में मिली शानदार सफलता और उपलब्धियों के बाद भारत के सचिव एडविन माँटेगू ने खुश होकर सेना की प्रत्येक शाखा में भारतीयों को सेवा का अवसर दिया और 10 स्थान सेण्डहर्स्ट सैन्य अकादमी में सुरक्षित कर दिये। 1919 में 'भारत सेना समिति' लार्ड ईशर की अध्यक्षता में बनी, जिसने 10 जून, 1920 को अपनी रिपोर्ट दे दी। इस रिपोर्ट के सूक्ष्म परीक्षण हेतु भारतीय नेताओं ने मांग की तो सर तेज बहादुर सप्रू समिति ने 21 मार्च, 1921 को अपना 15 सूत्रीय प्रस्ताव केन्द्रीय विधानमण्डल के समक्ष अनुमोदनार्थ रखा, जिस पर कोई ध्यान नहीं दिया। जहां 22 जून, 1920 को लार्ड ईशर ने अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, वहीं उसी समय जनरल हेनरी एस0 रॉलिन्सन ने भारत आकर भारतीय सेना का सी.इन.सी. पद ग्रहण किया और ईशर समिति के प्रस्तावों तहत भारतीय सेना में सुधार किये। 9 जुलाई, 1923 को केन्द्रीय विधानमण्डल की बैठक में रॉलिन्सन ने लार्ड इन्शेप छंटनी समिति की घोषणा की, जिसमें भारतीय शान्तिकालीन सेना इस प्रकार थी: 1914 में ब्रिटिश रैंक के 75,366 व भारतीय रैंक के 1,58,908 सैनिक और 1923 में 57,080 ब्रिटिश रैंक के व 14,0052 भारतीय रैंक के सैनिकों की छटनी की गयी। 1930 में भी लगभग 40 हजार अंग्रेज और भारतीय सैनिकों की छंटनी की गयी।

Scanned by CamScanner

सेना के भारतीयकरण की प्रक्रिया– सन् 1857 की क्रान्ति के बाद 1858 में जब भारत की प्रैसीडेन्सी सेना सीधें ब्रिटिश ताज के अधीन आयी तो व्यापक सुधार की प्रक्रिया शुरू हुई। 19वीं शताब्दी के अन्त तक किसी भी भारतीय को किंग कमीशन नहीं दिया जाता था, लेकिन सेना की चिकित्सा सेवा में एक भारतीय कर्नल बाबा जीवन सिंह सी. आई. आई., आई. एम. एस. को सन् 1891 में किंग कमीशन दिया गया था। 1901 में इम्पीरियल कैडेट कोर की स्थापना हुई और 1905 में किंग कमीशन देने की घोषणा ब्रिटिश सम्राट एडवर्ड सप्तम् ने की थी। सन् 1918 में भारतीयों को भी किंग कमीशन का पात्र घोषित किया और सेण्डहर्स्ट सैन्य अकादमी में 10 स्थान सुरक्षित कर दिये गये। 25 अगस्त, 1917 को थल सेना की अश्वारोही यूनिट में सेवारत 7 भारतीयों को किंग कमीशन प्राप्त हुआ। प्रथम महायुद्ध की समाप्ति के बाद दो भारतीयों– श्री के0 एस0 हिम्मत सिंह (राजपूत बटा0) तथा के0 एस0 माधव सिंह को 23 मार्च व 24 अक्टूबर, 1918 को किंग कमीशन प्राप्त हुआ। इसके साथ हेली कैडेट कॉलेज इन्दौर के प्रथम बैच के स्नातक व भारत के प्रथम थल सेनाध्यक्ष फील्ड मार्शल के. एम. करिअप्पा को 1 दिसम्बर, 1919 को किंग कमीशन प्राप्त हुआ और 17 जुलाई, 1920 को उनका स्थायीकरण कर दिया गया।

सेना के भारतीयकरण हेतु भारतीय नेताओं ने ब्रिटिश सरकार पर दबाव बनाया तो सन् 1921–23 के मध्य अनेक नयी योजनायें बनायीं, जिनमें उनका स्वयं स्वार्थ अधिक था। देहरादून में प्रिंस ऑफ वेल्स मिलिट्री कालेज की स्थापना (1922) और 'ए0एस0 काव योजना' 14 सितम्बर, 1921, उन्हीं नीतियों के फल थे। भारतीय सेना पर अंग्रेजी नियंत्रण रखने के उद्देश्य से ही सी. इन. सी. लार्ड रॉलिन्सन ने फरवरी 1923 में 'आठ इकाई योजना' बनायी। 1925 में भारतीयकरण की मांग जोर पकड़ने लगी और 19 फरवरी, 1925 को राजू समिति व मोतीलाल नेहरू समिति (मई 1928) के माध्यम से अंग्रेजों पर दबाव बनाया गया तो काफी सीमा तक सफलता भारतीयों को मिली। नवम्बर 1930 से जनवरी 1931 तक के प्रथम गोलमेज सम्मेलन (इंग्लैण्ड) में भारतीय नेताओं के प्रयासों के फलस्वरूप सेना के भारतीयकरण हेतु कदम उठाने के लिए सर फिलिप चैटवुड समिति (23 मई, 1931) बनी, जिसके सुझाव पर 1 अक्टूबर, 1932 को देहरादून में भारतीय सैन्य अकादमी की स्थापना हुई। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व तक प्रतिवर्ष इस अकादमी से 60 भारतीय प्रशिक्षित होकर निकलते थे, जिनकी नियुक्ति सैकिण्ड लैफ्टि0 के पद पर होती थी। जनवरी, 1935 में बंगलौर में भारतीय तोपखाने की एक फील्ड ब्रिगेड बनी जो भारतीयकरण की दिशा में एक ठोस कदम थी।

1936 में एक बार पुनः यूरोप में युद्ध के बादल मंडराने लगे तो सेना के भारतीयकरण की दिशा में आधुनिकीकरण हेतु भारतीय सेना के सी–इन–सी जे0 बी0 ऑकिनलेक समिति बनाई गयी। इसके बाद सितम्बर, 1938 में चैटफील्ड समिति बनाई गयी, जिसने 30 जनवरी, 1939 को अपने सुझाव दिये। फलतः कुछ ठोस कदम उठाये गये।

द्वितीय महायुद्ध कालीन भारतीय सेना और भारतीयकरण के प्रयास– 3 सितम्बर, 1939 को ब्रिटेन महायुद्ध में शामिल हो गया। इस महायुद्ध की प्रमुख विशेषता यह रही कि भारतीय सेना का तेजी से भारतीयकरण किया गया।[13] सभी जातियों को भर्ती किया जाने लगा, पुरानी यूनिटों के सैनिकों को पुनःवायसराय कमीशन दिया गया और भारतीय अफसरों व जवानों को किसी भी यूनिट में तैनात किया जाने लगा। इस समय भारत में ब्रिटिश सैनिकों सहित कुल सैनिक संख्या 2,37,000 थी। 35,000 सैनिकों की तुरन्त भर्ती की गयी। इस प्रकार सभी रैंकों में 1 अप्रैल, 1940 तक सैन्य

Scanned by CamScanner

संख्या 2,77,648 हो गयी, जबकि नियमित सेना के 23,581 सैनिक विदेशों में कार्यरत थे। 14 मई 1940 से दिसम्बर 1943 तक योजना 'ए' के अन्तर्गत 1 लाख सैनिक अतिरिक्त रूप में भर्ती किये गये तो कुल सैनिकों की संख्या लगभग 4,17,704 हो गयी। भारतीयों ने बर्मा व मलाया मोर्चे पर जापानियों के विरूद्ध सराहनीय कार्य किया एवं स्वतंत्र संक्रियात्मक कमाण्ड–दक्षिण–पूर्व एशिया कमाण्ड का गठन किया, जो पूर्णतः भारतीय कमाण्ड पर निर्भर थी।

तीसरे चरण में जनवरी 1944 से सितम्बर 1945 के बीच सेना में कोई प्रमुख विस्तार नहीं हुआ, लेकिन विशाल सेना के रख–रखाव की समस्या उत्पन्न हो गयी। इस बीच यह सैन्य संख्या लगभग 26,44,323 थी, जिसमें विभिन्न सैनिकों की स्थिति इस प्रकार थी[14] (1) ब्रिटिश सेना–2,40,613, (2) भारतीय सेना–20,18,196 और (3) सहायक सेनायें (भारत)–15,374। महायुद्ध के बाद भारतीय अफसरों की संख्या 8340 थी और शेष ब्रिटिश अफसर थे। प्रारम्भ में यह संख्या मात्र 396–400 के आस–पास थी और शेष ब्रिटिश अफसर 4000 से 4028 तक थे। शुरू का यह अनुपात (10:11) युद्ध के बाद घटकर 4:11 रह गया था। मई 1945 तक 220 से भी अधिक भारतीय लेफ्टि0 कर्नल और इससे भी उच्च पदों पर थे।

सन् 1942 से पूर्व तक किसी भी भारतीय सैन्य अधिकारी को किसी भी सैन्य इकाई के नेतृत्व करने का (कमान संभालने) अधिकार प्राप्त नहीं था और न ही उन्हें उच्च सैन्य पद प्राप्त था। 1942 में प्रथम बार लैफ्टि0 कर्नल के0 एम0 करिअप्पा को स्वतंत्र यूनिट का नेतृत्व प्रदान किया गया और 1946 में इन्हीं को प्रथम बार ब्रिगेड का स्वतंत्र नेतृत्व करने का अधिकार दिया गया। सितम्बर 1946 में अन्तरिम सरकार के गठन के साथ ही सेना के भारतीयकरण/राष्ट्रीयकरण पर गंभीर चिंतन शुरू हो गया। अतः 30 नवम्बर, 1946 को श्रीमान गोपाल स्वामी आयंगर के नेतृत्व में एक 'सशस्त्र सेना राष्ट्रीयकरण समिति' का गठन किया गया, जिसने 12 मई, 1947 को अपनी रिपोर्ट अंतरिम सरकार को प्रस्तुत कर दी, जिसमें सेना के राष्ट्रीयकरण और संगठन से जुड़ी बातों को स्पष्ट किया था।

स्वाधीनता के बाद (15 अगस्त, 1947) ही भारत में नये सैन्य मुख्यालय की स्थापना हो गयी। विभाजन से उत्पन्न जटिल परिस्थिति का सामना करने हेतु भारतीय सेना में सेवारत ब्रिटिश सैन्य अफसरों की सेवायें लेना आवश्यक हो गया, तो भारत सरकार ने ब्रिटिश सरकार के साथ 1 जनवरी, 1948 को थल सेना में एक वर्ष हेतु, वायु सेना में दो वर्ष हेतु (आवश्यकतानुसार यह अवधि एक वर्ष हेतु और बढ़ाई जा सकती थी) तथा नौसेना में तीन वर्ष हेतु अंग्रेजी सैन्य अफसरों की सेवायें लेने का समझौता किया। दोनों पक्ष सभी मामलों में इस बात के लिए स्वतंत्र थे कि वे तीन माह पूर्व सूचना देकर सेवा समाप्त कर सकते थे। उस समय उपलब्ध भारतीय सैन्य अधिकारियों की संख्या 93 थी।[15] इनमें 5 मूल पदाधिकारी ले0 कर्नल तथा 88 कार्यवाहक अस्थाई ले0 कर्नल थे, जो 13 से 20 वर्ष की सेवा कर चुके थे।

इसी प्रकार भारतीय नौसेना में ऐसे ही दो स्थाई भारतीय अफसर थे, जिन्होंने रायल इंडियन नेवी में 10 वर्ष से अधिक सेवा की थी। वायु सेना में भी 11 वर्ष से अधिक सेवाकाल वाले कुल 33 अफसर थे। अतः स्पष्ट है कि भारतीय सेना में वरिष्ठ व अनुभवी अफसरों की कमी थी। पं0 नेहरू ने अंग्रेज अफसरों के समक्ष बोलते हुए कहा था कि– "मेरी सरकार की नीति यथासम्भव कम से कम समय में भारतीय सेना के राष्ट्रीयकरण

Scanned by CamScanner

करने की है। इस लक्ष्य की प्राप्ति हेतु अनुभवी ब्रिटिश अफसरों की मदद, विशेषकर तकनीकी शाखाओं में, मेरे देश के लिए अत्यधिक महत्व की बात होगी।"[16] 15 अगस्त, 1947 को विभाजन के समय भारतीय सेना में ब्रिटिश अफसरों के रिक्त पदों को भरने हेतु उपलब्ध भारतीय अफसरों को दो या तीन उच्च पदों (रैंक) पर प्रोन्नति दी गयी। जैसे–जैसे भारतीय अफसर बढ़ते गये उसी क्रम में अंग्रेज अफसर प्रतिवर्ष घटते गये और अप्रैल 1956 तक इनकी संख्या मात्र 6 रह गयी थी।

1. स्थल सेना– स्थल सेना में 15 अगस्त, 1947 से पूर्व अंग्रेज अफसरों की संख्या 10,000 थी, जो बाद में घटकर 1200 रह गयी। 1 जनवरी, 1948 के बाद अंग्रेज अफसरों की संख्या मात्र 300 रह गयी और 1 फरवरी, 1948 को लगभग 95 प्रतिशत भारतीय अफसर हो गये। शेष बचे अंग्रेज अफसर केवल रैजीमेंट प्रशिक्षण केन्द्रों के कमांडर थे।[17] अप्रैल 1948 तक ले0 कर्नल तक के सभी कमाण्डिंग अफसर भारतीय थे। 13 सब एरिया कमाण्डरों में से मात्र 3 अफसर अंग्रेज अपने–अपने पदों पर रह गये थे। 15 अगस्त, 1947 तक कोई भी भारतीय ब्रिगेडियर के पद पर नहीं था। 1 जनवरी, 1948 तक काफी सुधार होने के बाद तकनीकी शाखाओं में भी 60 प्रतिशत पदों पर भारतीय अफसर तैनात हो गये और अप्रैल तक इनका प्रतिशत 80 हो गया था। 21 नवम्बर, 1947 को एक भारतीय सैन्य अफसर ने पूर्वी कमाण्ड की बागडोर संभाली थी और 20 जनवरी, 1948 को पश्चिमी कमाण्ड और 1 मई, 1948 को दक्षिणी कमाण्ड भी भारतीय अफसरों के हाथ में आ गयी।[18]

15 अगस्त, 1947 को सेना मुख्यालय में एक भारतीय अफसर ने जी. ओ. सी–इन–सी. और दूसरे ने सैन्य सचिव का पद संभाल लिया था। जनवरी, 1948 के प्रारम्भ में एक भारतीय को एडजूटेंट जनरल बनाया तथा मार्च में अन्य भारतीय को क्वार्टर मास्टर जनरल बनाया गया। जनवरी 1949 में जब मास्टर जनरल ऑफ ऑर्डिनेन्स शाखा को शुरू किया गया, जिसका प्रथम अफसर अंग्रेज ही था, किन्तु अगस्त 1949 में इस पद पर भारतीय अफसर की नियुक्ति हो गयी। सेना की इंजीनियरिंग शाखा में 15 अक्टूबर, 1955 को भारतीय अफसर नियुक्त हुआ। 15 जनवरी, 1949 को जनरल के0 एम0 करिअप्पा को भारतीय सेना का सी–इन–सी. बनाया गया। इस प्रकार लगभग 200 वर्ष बाद कोई भारतीय थल सेना का सर्वोच्च अफसर बना। अप्रैल 1956 तक अंग्रेज अफसर घटते–घटते मात्र 6 रह गये थे।

जहाँ तक देशी रियासतों और उनकी सेना का प्रश्न है, भारत के आजाद होने के साथ ही लगभग 600 रियासतें भी स्वतंत्र हो गयीं। अब इनके लिए यह स्वतंत्रता थी, कि वे भारत या पाक में से सुविधानुसार एक के साथ मिल सकती थीं या स्वतंत्र रह सकती थीं। पं0 नेहरू ने, जो गवर्नर जनरल की कार्यकारी परिषद् के उपाध्यक्ष थे, यह बात स्पष्ट कर दी थी, कि जो रियासतें भारतीय सीमा में हैं उनका स्वतंत्र अस्तित्व संभव नहीं है और वे भारत के लिए चिंताजनक हो सकती है। अतः 25 जुलाई, 1947 को रियासतों के शासकों एवं उनके प्रतिनिधियों के सम्मेलन में माउण्टबेटन ने स्पष्ट कहा था कि 'यद्यपि रियासतें अपने भविष्य निर्धारण के लिए स्वतंत्र हैं किन्तु भौगोलिक परिस्थितियों का ध्यान अवश्य रखें क्योंकि किसी राष्ट्र की सुरक्षार्थ भौगोलिक परिस्थितियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। अतः अधिकांश रियासतें स्वतंत्र भारत का ही अंग मात्र है।" इस प्रकार जूनागढ़, हैदराबाद व कश्मीर रियासत को छोड़ सभी रियासतें भारत में विलीन हो गयी, जिसका श्रेय सरदार पटेल को है। स्वाधीनता के समय भारत में 1935

Scanned by CamScanner

का ऐक्ट संविधान के रूप में लागू था जिसके तहत सभी देशी राज्य भारत या पाकिस्तान में मिल गये थे। फरवरी, 1948 को जनमत संग्रह के बाद जूनागढ़ रियासत भी भारत में विलीन हो गयी। हैदराबाद के लिए मजबूरन हल्के से बल प्रयोग करने के बाद (मेजर जनरल जे0 एन0 चौधरी के नेतृत्व में 5 1/2 दिन चले 'ऑपरेशन पोलो') 23 सितम्बर, 1948 को यह भी भारत में विलीन हो गयी। 26 अक्टूबर, 1947 जम्मू–कश्मीर रियासत भी, महाराजा हरि सिंह के हस्तांतरण प्रपत्र पर हस्ताक्षर करने के बाद, भारत का अटूट अंग बन गयी। रियासतों की सेनाओं का पुनर्गठन करके भारतीय सेना का अंग बनाकर 1 अप्रैल, 1951 से सेवा शर्तों की पात्र बना दी गयी।

2. नौ सेना– नौसेना में भी भारतीय जवान व अफसर कार्यरत थे, जिनका आजादी के बाद विभाजन हुआ था। 1612 ई0 में प्रथम बार ईस्ट इण्डिया कम्पनी के चार समुद्री जहाज सूरत आये थे, जिन्हें इंडियन मैरीन कहा गया था। 1830 में इसका नाम बदलकर 'इंडियन नेवी' कर दिया गया। 1863 में इसे 'बाम्बे मैरिन' तथा 1892 में 'रॉयल इंडियन मैरीन' कहा गया और अन्त में 1934 में यह 'रॉयल इंडियन नेवी' कहलाई। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व नौसेना में केवल 1708 नाविक तथा अफसर कार्यरत थे, किन्तु 1939 तक यह संख्या 3168 हो गयी और 1943 में 27,651 थी। नौ सेना में भारतीयों के लिए कमीशन हेतु सिद्धान्तः कोई बाधा नहीं थी, फिर भी 1939 में इसमें केवल 40 भारतीय नौसैनिक अफसर थे। युद्धोपरान्त रॉयल इंडियन नेवी में विभिन्न पदों पर 30,478 नौसैनिक कर्मचारी सेवारत थे, जिनमें ब्रिटिश–भारतीय अफसर लगभग समान संख्या में थे।

स्वाधीनता के समय रॉयल इंडियन नेवी के कुल 850 के संवर्ग में 200 अंग्रेज कमीशन प्राप्त एवं वारंट अफसर थे। 1948 में अपेक्षित अंग्रेज अफसरों की कुल संख्या 60 कमीशन प्राप्त एवं 70 वारंट अफसर की थी। सन् 1947 के अन्त तक रॉयल इंडियन नेवी के सभी पोतों की कमाण्ड भारतीय अफसरों के हाथ में थी। नौसेना मुख्यालय के 75 अफसरों के स्टाफ में 9 को छोड़कर शेष सभी भारतीय अफसर थे।[19] 22 अप्रैल, 1958 को वाइस एडमिरल आ0 डी0 कटारी ने भारतीय नौसैना के चीफ आफ द नेवल स्टाफ की कमान संभाली जो प्रथम भारतीय थे। 2 अक्टूबर, 1956 को रियर एडमिरल के पद पर भी भारतीय की नियुक्ति हुई। दिसम्बर 1951 से दिसम्बर 1954 के मध्य कैप्टेन अधीक्षक, आइ. एन. डॉकयार्ड, नौसेना सचिव (मुख्यालय), नौसेना स्टाफ उप–प्रमुख, कमोडोर भारसाधक–कोचीन, कमोडोर भारसाधक–मुम्बई, सामिग्री प्रमुख (मुख्यालय) तथा नौसेना इंजीनियरिंग के निदेशक पदों पर भारतीय अफसरों की नियुक्ति हुई। फरवरी 1955 में शस्त्रास्त्र आपूर्ति निदेशक के पद पर भी भारतीय अफसर नियुक्त हो गया। सन् 1957 के शुरू में नौसेना स्टाफ के अलावा जो थोड़े से अंग्रेज अफसर शेष थे, वे अधिकतर शस्त्रास्त्र निरीक्षण निदेशालय, नौसेना उड्डयन शस्त्रास्त्र–आपूर्ति निदेशालय, नौसेना संचार तथा निर्माण तकनीकी अफसरों के पद पर थे। नौसैनिक तकनीकी क्षेत्र में भारतीय अफसरों की कमी थी। अतः काफी समय तक अंग्रेज अफसरों की सेवायें ली गयीं। अप्रैल 1962 में एक भारतीय अफसर के नौसेना उड्डयन के प्रमुख का पद ग्रहण कर लेने के साथ ही नौसेना का पूर्णतः राष्ट्रीयकरण हो गया।

3. वायु सेना– राइट बन्धुओं द्वारा विमान के आविष्कार और सफल उड़ान (1903) के बाद वायु परिवहन क्षेत्र में क्रान्ति आई तो विमानों के सामरिक कार्यों और उपयोगों से आकाशीय युद्ध का मार्ग भी प्रशस्त हो गया और यह कहा गया कि "युद्ध त्रिदिशात्मक हो गया।" प्रथम महायुद्ध में विमानों के सामरिक कार्यों को देखते हुए इस दिशा में विशेष कार्य किया गया। स्कीन समिति के सुझावों के बाद 1935 में 2 अप्रैल को केन्द्रीय

Scanned by CamScanner

विधानमण्डल में 'भारतीय वायु सेना अधिनियम' प्रस्तुत किया गया जो 8 अक्टूबर, 1932 से प्रभावी हो गया। इस प्रकार 1 अप्रैल, 1933 को 'भारतीय वायु सेना' का जन्म हुआ।

यद्यपि प्रथम महायुद्ध के बाद 1919 में ब्रिटेन में 'रॉयल एयर फोर्स' का गठन हो चुका था, किन्तु 1919 से पूर्व यह 'रॉयल फ्लाइंग कोर' के नाम से कार्यरत थी। युद्धकाल में अनेक भारतीय रॉयल फ्लाइंग कोर में अफसर के रूप में कार्यरत थे। इसकी प्रथम टुकड़ी 1915 में भारत आयी थी। भारतीय वायु सेना के विधिवत् गठन हेतु 1930 में 6 भारतीय कैडिटों को प्रशिक्षण हेतु रॉयल एयर फोर्स कालेज, क्रैनवेल भेजा गया। 1939 तक भारतीय वायु सेना के प्रथम स्क्वाड्रन में 3 फ्लाइट थीं। इस समय वायु सैनिकों की संख्या 1628 थी। द्वितीय महायुद्ध काल में 1942 के अन्त तक इसमें 4 स्क्वाड्रन और कई तटरक्षक फ्लाइट्स हो गये। सभी फ्लाइट्स में कमाण्डर भारतीय थे, किन्तु तकनीकी शाखाओं में अंग्रेज ही नियुक्त थे और स्क्वाड्रन का नेतृत्व भी शाही सेना के अंग्रेज अफसर करते थे। अन्य सेनाओं की तरह इस सेना में भी आकार वृद्धि की गयी तो 1944–45 तक इसमें 9 स्क्वाड्रन, 1638 अफसर व लगभग 27000 वायुकर्मी थे। 1944 में ही भारतीय वायु सेना से तटरक्षक फ्लाइट्स समाप्त कर दिये गये। युद्धकाल में इसका नाम रॉयल एयर फोर्स ही रहा और भारत में हवाई अड्डों के निर्माण और अनेक शाखाओं के गठन के साथ–साथ प्रशिक्षण केन्द्रों का भी विस्तार हुआ। युद्ध समाप्ति के बाद भी इसके आधुनिकीकरण का कार्य तेजी से जारी रहा।

स्वाधीनता से पूर्व रॉयल इंडियन एयर फोर्स में रॉयल फोर्स के 100 अफसर व 500 वायु सैनिक कर्मी कार्यरत थे। 15 अगस्त, 1947 के बाद भारतीयों ने सभी वरिष्ठ स्टाफ एवं संक्रियात्मक पदों का दायित्व संभाल लिया। अंग्रेज अफसर कुछ ही तकनीकी पदों पर तैनात थे। भारत सरकार ने 1947 के बाद भारतीय वायु सेना पर विशेष ध्यान दिया तो कुछ वर्षों तक अंग्रेज अफसरों की सेवायें ली जाती रहीं। रॉयल इंडियन एयर फोर्स के वरिष्ठतम भारतीय अफसर को एयर फोर्स के उप–वायुकमाण्डर एवं वायु मुख्यालय में वरिष्ठ वायु स्टाफ अफसर के पद पर नियुक्त किया गया। 15 नवम्बर, 1947 को एयर वाइस मार्शल के पद पर उसकी पदोन्नति कर दी गयी और उन्हें डिप्टी चीफ आफ एयर स्टाफ का पद नाम दिया गया। एयर मार्शल एस0 मुखर्जी ने प्रथम भारतीय वायु सेनाध्यक्ष का पद 1 अप्रैल, 1954 को संभालने के साथ ही वायु सेना का भी पूर्ण राष्ट्रीयकरण हो गया।

Scanned by CamScanner